रतुल महंत ..... अपीलकर्ता

बनाम

निर्मलेंदु साहा ..... प्रत्यर्थी

सिविल अपील संख्या- 4627/2021

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार

पीठ- हेमंत गुप्ता एवं ए.एस. बोपन्ना, न्यायमूर्तिगण

ए.एस. बोपन्ना, न्यायमूर्ति

1. अपीलकर्ता ने 2011 में विद्वान मुंसिफ नंबर 2, कामरूप गुवाहाटी के न्यायालय में प्रत्यर्थी के खिलाफ हक मुकदमा संख्या 334/2011 प्रस्तुत किया, जिसमें यह घोषणा करने की मांग की गई कि मुकदमे की पश्चिमी सीमा पर अनुसूची संपत्ति ए, बी और सी है जो सामान्य सार्वजनिक नाली है जिसका उपयोग वादी द्वारा किया जाता है। इस प्रभाव की भी घोषणा चाहा गया कि प्रतिवादी के वाद अनुसूची सी की सीमा पर सार्वजनिक नाली वादी के सम्पत्ति से संलग्न है इसलिए प्रतिवादी किसी भी समय बिन्दु पर अवरोध नहीं कर सकता है। सहायक अनुतोष के रुप में, अपीलकर्ता ने प्रतिवादी के विरुद्ध् स्थायी निषेधाज्ञा का भी मांग किया ताकि मुख्य जी.एम.सी. नाली तक उक्त नाली में पानी के मुक्त प्रवाह की अनुमति दी जा सके।

2. प्रत्यर्थी ने उपस्थित होकर गुण-दोष के आधार पर वादी द्वारा प्रस्तुत दावे का खंडन किया। इसके अलावा, प्रतिवादी ने गुवाहाटी नगर निगम अधिनियम, 1971 (संक्षेप में 'जीएमसी' अधिनियम) में निहित प्रावधानों के मद्देनजर मुकदमे पर विचार करने के लिए सिविल अदालत के अधिकार क्षेत्र का मुद्दा उठाया। उक्त मुकदमे में, चूंकि अपीलकर्ता ने अस्थायी निषेधाज्ञा के लिए भी प्रार्थना की थी, विचार करने पर विचारण न्यायालय ने इसे अधिकार क्षेत्र के संबंध में आपत्ति के संदर्भ के बिना, मंजूर कर लिया था। इसलिए प्रतिवादी ने सिविल प्रक्रिया संहिता (संक्षेप में 'सीपीसी') के आदेश 43 नियम 1 के साथ पठित धारा 96 (1) के तहत निचली

अपीलीय अदालत के समक्ष अपील दायर करके निषेधाज्ञा के आदेश पर हमला किया था। उक्त अपील में, प्रतिवादी जो कि अपीलकर्ता था, ने तर्क दिया था कि विद्वान मुंसिफ द्वारा पारित दिनांक 30.09.2011 का आदेश उचित नहीं था क्योंकि मुकदमे की ग्राह्यता से संबंधित मुद्दा जीएमसी अधिनियम के प्रावधानों के क्षेत्राधिकार को छोड़कर है। सिविल कोर्ट मामले की जड़ तक जाता है। यह तर्क दिया गया कि मुकदमे में मांगी गई किसी भी अन्य राहत पर विचार करने से पहले उस पर विचार करना और निर्णय लेना आवश्यक था। उक्त विविध आवेदन संख्या 33/2011 में निचली अपीलीय अदालत अपने आदेश दिनांक 21.09.2012 के माध्यम से इस निष्कर्ष पर पहुंची कि क्षेत्राधिकार पहलू का निर्णय शुरुआत में विद्वान मुंसिफ द्वारा किया जाना है। इसलिए, गुण-दोष पर गौर किए बिना, निचली अपीलीय अदालत ने किसी अन्य राहत देने पर विचार करने से पहले क्षेत्राधिकार के प्रश्न पर निर्णय लेने के लिए उक्त अपील में दिए गए आदेश को रद्द करते हुए मामले को वापस भेज दिया।

3. अपीलकर्ता ने उक्त आदेश से व्यथित होने का दावा करते हुए गौहाटी उच्च न्यायालय के समक्ष सीआरपी संख्या 260/2013 में पुनरीक्षण याचिका दाखिल की। विद्वान न्यायाधीश ने प्रतिद्वंद्वी तर्कों पर ध्यान देते हुए, अपने आदेश दिनांक 29.08.2013 के माध्यम से निचली अपीलीय अदालत के फैसले से सहमति व्यक्त की थी कि मुकदमे पर विचार करने के लिए सिविल अदालत के अधिकार क्षेत्र को शुरू में ही तय किया जाना था। तदनुसार पुनरीक्षण याचिका का निस्तारण कर दिया गया। पक्षों को विद्वान मुंसिफ की अदालत में अपनी दलीलें पेश करने की अनुमति दी गई।

4. इसके अनुसरण में विद्वान मुंसिफ ने क्षेत्राधिकार से संबंधित मुद्दे पर विचार किया है और अपने आदेश दिनांक 16.11.2013 द्वारा इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि जीएमसी अधिनियम के तहत विचार की गई रोक तथ्यात्मक स्थिति पर लागू नहीं होती है, इसकी प्रकृति को ध्यान में रखते हुए राहत की प्रार्थना की. तदनुसार, विद्वान मुंसिफ ने माना है कि सिविल न्यायालय को पक्षों के बीच मुकदमे की सुनवाई का अधिकार क्षेत्र है। प्रत्यर्थी ने दिनांक 16.11.2013 के उक्त आदेश से व्यथित होने का दावा करते हुए गौहाटी उच्च न्यायालय के समक्ष सीआरपी संख्या 128/2018 में पुनरीक्षण याचिका दाखिल की। विद्वान न्यायाधीश ने दिनांक 06.06.2014 के आदेश के माध्यम से माना है कि इस सिविल न्यायालय का क्षेत्राधिकार निहितार्थ से बाहर हो जाएगा और पक्षकार केवल जीएमसी अधिनियम के तहत निर्धारित प्रक्रिया के तहत राहत का दावा कर सकती है। उस पृष्ठभूमि में, पुनरीक्षण याचिका में लगाए गए दिनांक 16.11.2013 के

आदेश को रद्द कर दिया गया था, मुकदमे को सुनवाई योग्य नहीं माना गया था और अपीलकर्ता को जीएमसी अधिनियम के प्रासंगिक प्रावधानों के तहत अपनी शिकायत को व्यक्त करने की स्वतंत्रता सुरक्षित रखी गई थी, यदि सलाह दी गई हो। तदनुसार, टाइटल सूट नंबर 334/2011 में वादपत्र को खारिज करने का आदेश दिया गया था। इसलिए अपीलकर्ता गौहाटी उच्च न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 08.04.2014 के आदेश से व्यथित होने का दावा करते हुए इस न्यायालय के समक्ष अपील कर रहा है।

5. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता श्री पार्थिव के. गोस्वामी ने आक्षेपित आदेश की आलोचना करते हुए तर्क दिया है कि प्रथम दृष्टया निचली अपीलीय अदालत और वर्तमान दौर में उच्च न्यायालय ने इस निष्कर्ष पर पहुंचने में गलती की है कि मुकदमा सही नहीं है। यह तर्क दिया गया है कि वर्तमान मामले को सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश VII नियम 11 (डी) के तहत कवर करने और सिविल मुकदमे पर रोक लगाने के लिए उच्च न्यायालय द्वारा अपनाया गया तर्क उचित नहीं है। यह तर्क दिया गया है कि मुकदमे में मांगी गई राहत की प्रकृति के लिए जीएमसी अधिनियम या उस समय लागू किसी अन्य कानून के तहत सिविल अदालत से संपर्क करने पर कोई रोक नहीं है। उस संबंध में, विद्वान अधिवक्ता ने जीएमसी अधिनियम की धारा 341 का उल्लेख किया है जो क्षेत्राधिकार की रोक पर विचार करता है और यह इंगित करेगा कि यह उस हिस्से के तहत राहत तक सीमित है जिस पर रोक लागू की गई है। उस संबंध में, अधिनियम के भाग VI का संदर्भ यह तर्क देने के लिए दिया गया है कि यदि कोई सिविल मुकदमा वर्जित है, तो यह केवल उन गतिविधियों की प्रकृति के संबंध में है जो धारा 322 में बताई गई हैं और अन्य प्रावधान जो भाग में दिखाई देते हैं अधिनियम का VI. यह तर्क दिया गया है कि तत्काल मुकदमे में मांगी गई राहत एक नाली के संबंध में है जो मुकदमे की अनुसूची संपत्तियों के पश्चिमी तरफ मौजूद थी और पानी के मुक्त प्रवाह के अधिकार की रक्षा के लिए थी जिसका आनंद वादी ने खरीदे जाने के समय से लिया था। संपत्ति। जिस अधिकार की रक्षा की मांग की गई है वह सिविल कोर्ट के अधिकार क्षेत्र में है। यह तर्क दिया गया है कि भले ही जीएमसी अधिनियम की धारा 246, 247 और 248 में निहित प्रावधान, आयुक्त की शक्ति का संदर्भ देते हैं, उक्त प्रावधानों के तहत वादी को उपलब्ध कोई भी अधिकार केवल मांगी जाने वाली राहत की सहायता में हो सकता है। वादी द्वारा, लेकिन किसी भी स्थिति में इसे मुकदमे को कायम रखने में बाधा नहीं माना जा सकता। इसलिए यह तर्क दिया गया है कि उच्च न्यायालय

द्वारा पारित आदेश टिकाऊ नहीं है और मुकदमे को उसकी योग्यता के आधार पर आगे बढ़ाने की अनुमति दी जानी चाहिए।

6. प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री अरुणाभ चौधरी उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश को बरकरार रखना चाहते हैं। तर्क यह है कि जीएमसी अधिनियम सिविल कोर्ट द्वारा सुविधाओं से संबंधित मामलों पर विचार करने पर रोक लगाता है, जिन पर अधिनियम के तहत आयुक्त द्वारा विचार किया जाना है। यहां तक कि यह मानते हुए कि जीएमसी अधिनियम की धारा 341 केवल भाग VI के संबंध में एक एक्सप्रेस बार पर विचार करती है, जीएमसी अधिनियम की धारा 246, 247 और 248 में निहित प्रावधान नाली से संबंधित अधिकार मांगने वाले संपत्ति मालिक को आयुक्त से संपर्क करने के लिए मंच प्रदान करते हैं, जो उक्त मुद्दे पर निर्णय करेगा। उस संदर्भ में, यह तर्क दिया गया है कि यद्यपि धारा 341 को भाग V पर लागू नहीं किया गया है, आवश्यक निहितार्थ से, मुकदमा वर्जित हो जाएगा। उनका तर्क है कि इस मामले में वादी सार्वजनिक नाली के संबंध में अधिकार की मांग कर रहा है और ऐसी परिस्थिति में जब अधिनियम के तहत उपाय प्रदान किया जाता है, तो आम कानून के तहत उस पर विचार नहीं किया जाता है। उनका तर्क है कि उच्च न्यायालय द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश VII नियम 11 (डी) में निहित प्रावधान को लागू करना उचित था कि सिविल कोर्ट के पास तत्काल मुकदमे पर विचार करने का अधिकार क्षेत्र नहीं था। उस दृष्टि से, आदेशित वादपत्र की अस्वीकृति उचित है। अपीलकर्ता को बिना किसी उपाय के नहीं छोड़ा गया है और वैकल्पिक मंच को लागू करने की अनुमति दी गई है। ऐसी परिस्थिति में, आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

7. उपरोक्त तर्कों की पृष्ठभूमि में, मुकदमे की प्रकृति और उसमें मांगी गई राहत को इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए केवल सीमित सीमा तक ही ध्यान देने की आवश्यकता है कि क्या सिविल कोर्ट के पास मुकदमे के साथ आगे बढ़ने का अधिकार क्षेत्र था या नहीं। क्या जीएमसी अधिनियम में दिए गए अधिकार क्षेत्र के संबंध में कोई रोक लागू होगी। उस पहलू पर ध्यान देने से पहले, सीपीसी के पैरा 9 की सामग्री पर ध्यान देना आवश्यक है जो सिविल न्यायालय द्वारा क्षेत्राधिकार के प्रयोग का प्रावधान करता है। इसे इस प्रकार पढ़ा जाता है:-

"9. न्यायालयों को (यहां निहित प्रावधानों के अधीन) उन मुकदमों को छोड़कर, जिनमें उनका संज्ञान स्पष्ट रूप से या परोक्ष रूप से वर्जित है, दीवानी प्रकृति के सभी मुकदमों की सुनवाई करने का अधिकार क्षेत्र होगा।

स्पष्टीकरण: एक- मुकदमा जिसमें संपत्ति या किसी कार्यालय के अधिकार पर विवाद होता है, वह एक नागरिक प्रकृति का मुकदमा है, भले ही ऐसा अधिकार पूरी तरह से धार्मिक संस्कारों या समारोहों के प्रश्नों के निर्णय पर निर्भर हो सकता है।

स्पष्टीकरण द्वितीय- इस धारा के प्रयोजनों के लिए, यह मायने नहीं रखता कि स्पष्टीकरण 1 में निर्दिष्ट कार्यालय से कोई शुल्क जुड़ा है या नहीं या ऐसा कार्यालय किसी विशेष स्थान से जुड़ा है या नहीं।

इसके एक मात्र अवलोकन से संकेत मिलता है कि अदालतों के पास उन मुकदमों को छोड़कर नागरिक प्रकृति के सभी मुकदमों की सुनवाई करने का अधिकार क्षेत्र होगा, जिनमें उनका संज्ञान या तो स्पष्ट रूप से या परोक्ष रूप से वर्जित है। उस पृष्ठभूमि में, हालांकि मौजूदा मामले में, सीपीसी के आदेश VII नियम 11 (डी) के तहत एक आवेदन पर विचार करते समय विद्वान मुंसिफ के समक्ष यह मुद्दा नहीं उठा था, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि उच्च न्यायालय ने विचार करने के लिए उक्त प्रावधान को लागू किया है क्या मुकदमे पर रोक लगा दी गई है और उसके बाद यह माना गया है कि सिविल कोर्ट के पास कोई क्षेत्राधिकार नहीं है और उसने वादपत्र को खारिज करने का आदेश दिया है, आदेश VII नियम 11 (डी) में निहित प्रावधान पर ध्यान देना उचित होगा जो इस प्रकार है:

"आदेश VII नियम 11

वादपत्र की अस्वीकृति- वादपत्र निम्नलिखित मामलों में खारिज कर दिया जाएगा:-

(ए) एक्स एक्स एक्स एक्स एक्स

(बी) एक्स एक्स एक्स एक्स एक्स एक्स

(सी) एक्स एक्स एक्स एक्स एक्स

(डी) जहां वादपत्र में दिए गए बयान से ऐसा प्रतीत होता है कि वाद किसी विधि द्वारा वर्जित है।

(ई) एक्स एक्स एक्स एक्स एक्स

(च) xx xx xx xx"

उपर्युक्त प्रावधान के अवलोकन से संकेत मिलता है कि सिविल कोर्ट के लिए मुकदमे पर विचार करने पर रोक होगी, यदि ऐसा मुकदमा किसी भी विधि द्वारा स्पष्ट रूप से या परोक्ष रूप से वर्जित है। इसके अलावा, आदेश VII नियम 11 (डी) में विचार किया गया है कि वादपत्र में

दिए गए बयान से यह प्रतीत होना चाहिए कि मुकदमा किसी भी कानून द्वारा वर्जित है, ऐसी स्थिति में वादपत्र खारिज कर दिया जाएगा।

8. उस पृष्ठभूमि में, तत्काल मुकदमे में वादी के अवलोकन से पता चलता है कि अपीलकर्ता द्वारा दायर मामला यह है कि उसने श्री धन चंद्र महंत के साथ 08.12.1997 को 15 पट्टे की 'अनुसूची 'ए' संपत्ति श्री शैलेन्द्र मेधी एवं अन्य से खरीदी। श्री धन चंद्र महंत ने अपीलकर्ता के पक्ष में अपना अधिकार त्याग दिया। इस प्रकार अपीलकर्ता वाद अनुसूची 'ए' संपत्ति का एकमात्र मालिक बन गया है। यह तर्क दिया गया है कि बिक्री विलेख इंगित करता है कि पश्चिमी सीमा के अंतिम भाग में एक जल निकास नाली है जो सुश्री सुवोला देवी की संपत्ति की पश्चिमी सीमा के साथ भी गुजर रही थी और गुवाहाटी नगर निगम द्वारा बनाए गए सार्वजनिक नाली में शामिल हो जाएगी (संक्षेप में 'जीएमसी')। एक अन्य निकटवर्ती भूमि मालिक ने दिनांक 08.12.1997 को विक्रय दस्तावेज के तहत अनुसूची 'बी' संपत्ति खरीदी, जिसमें पश्चिमी सीमा भी जल निकासी के माध्यम से गुजरती है जो जीएमसी की सार्वजनिक नाली को जोड़ती है।

9. वादपत्र में आगे कहा गया है कि प्रतिवादी, जो अपीलकर्ता की संपत्ति के दक्षिणी तरफ की संपत्ति का मालिक है, ने 24.04.1984 के विक्रय दस्तावेज के तहत 13 पट्टे की सीमा खरीदी थी, जिसमें पश्चिमी सीमा को सार्वजनिक नाली के रूप में दिखाया गया है। यद्यपि उक्त सामान्य नाली खरीद के समय मौजूद थी और इसका उपयोग किया जा रहा था, प्रतिवादी पर आरोप है कि उसने आरसीसी सामग्री को डंप करके इसे अवरुद्ध कर दिया था और इसलिए पानी अपीलकर्ता की संपत्ति में बह गया था। यह उस प्रकाश में है, अपीलकर्ता ने यह घोषित करने के लिए राहत की प्रार्थना की थी कि अनुसूची ए, बी और सी संपत्तियों की पश्चिमी सीमा में एक आम सार्वजनिक नाली है जिसका उपयोग किया जा सकता है और वाद में की गई आगे की प्रार्थना से संकेत मिलता है कि, मांगी गई निषेधाज्ञा है मुख्य जीएमसी नाली तक पानी के मुक्त प्रवाह की अनुमति देने के लिए नाली सुविधा के शांतिपूर्ण आनंद के लिए।

10. इसलिए सवाल यह है कि क्या वादपत्र में मांगी गई राहत की प्रकृति विशेष रूप से जीएमसी अधिनियम के क्षेत्र में आती है और क्या मामला प्रस्तुत किया गया है और प्रार्थना की गई राहत जीएमसी अधिनियम में निहित किसी भी प्रावधान द्वारा वर्जित है। जैसा कि सीपीसी की धारा 9 के तहत विचार किया गया है, सिविल कोर्ट को मुकदमे पर विचार करने से वंचित किया जा सकता है, यदि हां, तो क्या वर्तमान प्रकृति का एक मुकदमा सीपीसी के आदेश VII नियम 11 (डी) के तहत परिकल्पित के रूप में खारिज किया जा सकता है।

11. सबसे पहले जीएमसी अधिनियम की धारा 341 पर ध्यान देना जरूरी है, जो सिविल कोर्ट के अधिकार क्षेत्र पर रोक का प्रावधान करती है, जो इस प्रकार है:

"341 क्षेत्राधिकार पर रोक- अन्यथा स्पष्ट रूप से प्रदान किए गए अनुसार बचाएं, किसी भी सिविल कोर्ट के पास अधिकार क्षेत्र नहीं होगा। किसी भी प्रश्न का निपटारा, निर्णय या निपटारा करना, जिसे इस भाग के अंतर्गत या इसके अंतर्गत आयुक्त द्वारा निपटाया जाना, निर्णय लिया जाना या निपटाया जाना आवश्यक है।

कथन के अवलोकन पर, यह इंगित करता है कि किसी भी सिविल न्यायालय के पास किसी भी प्रश्न को निपटाने, निर्णय लेने या निपटने का अधिकार क्षेत्र नहीं होगा जो उस भाग के अंतर्गत है जिसमें धारा 341 रखी गई है और आयुक्त द्वारा निपटान, निर्णय या निपटान की आवश्यकता है। भाग VI जिसके तहत रोक लगाई गई है वह भूमि, भवन और सड़कों से संबंधित है। इसलिए, प्रथम दृष्टया, यह इंगित करता है कि नगर निगम की सीमा के भीतर रहने वाले दो निजी व्यक्तियों के बीच एक आम नाली से संबंधित मुद्दा ऐसा मुद्दा नहीं है जिसके संबंध में राहत के लिए सिविल कोर्ट का दरवाजा खटखटाने के खिलाफ एक विशिष्ट रोक पर विचार किया गया है।

12. इसमें कोई संदेह नहीं है कि जीएमसी अधिनियम कुछ परिस्थितियों में नगर निगम के नाले से जुड़े नाले के उपयोग के तरीके को विनियमित करने के लिए आयुक्त को सशक्त बनाने का प्रावधान करता है। इस आशय के प्रावधान जीएमसी अधिनियम के भाग V में धारा 246, 247 और 248 में निहित हैं। उक्त प्रावधान इस प्रकार पढ़ें:

"246. नाली के मालिक या संयुक्त मालिक का दूसरों को इसका उपयोग करने की अनुमति देने का दायित्व:- नगरपालिका नाली से जुड़े नाली या आयुक्त द्वारा जल निकासी के लिए अलग किए गए अन्य स्थान का प्रत्येक मालिक अन्य व्यक्तियों को इसका उपयोग करने की अनुमति देने के लिए बाध्य होगा। या धारा 248 के तहत निर्धारित शर्तों पर अन्य व्यक्तियों को उसके संयुक्त मालिकों के रूप में स्वीकार करना।

247. नाली के उपयोग का अधिकार मालिक के अलावा किसी अन्य व्यक्ति द्वारा कैसे प्राप्त किया जा सकता है:- कोई भी व्यक्ति जो अपने परिसर को किसी नाली के माध्यम से नगर निगम के नाले में डालना चाहता है, जिसका वह मालिक नहीं है, वह मालिक के साथ एक निजी व्यवस्था कर सकता है। अपने नाले का उपयोग करने की अनुमति, या ऐसे नाले का उपयोग करने के अधिकार के लिए आयुक्त को आवेदन कर सकता है।

248. आयुक्त नाली के मालिक के अलावा किसी अन्य व्यक्ति को उसका उपयोग करने के लिए अधिकृत कर सकता है या उसे उसका संयुक्त उपयोगकर्ता घोषित कर सकता है:- (1) जहां आयुक्त की राय है कि आवेदन प्राप्त होने पर या अन्यथा, सबसे सुविधाजनक साधन जिसके द्वारा किसी भी परिसर का मालिक या अधिभोगी ऐसे परिसर की निकासी उक्त स्वामी या अधिभोगी के अलावा किसी अन्य व्यक्ति की नाली के माध्यम से कर सकता है, आयुक्त नाली के मालिक को उस पर अपनी आपत्ति बताने का उचित अवसर देगा, और यदि नहीं आपत्ति उठाई जाती है या यदि आपत्ति उसे अमान्य या अपर्याप्त लगती है, तो वह लिखित आदेश द्वारा उक्त मालिक या अधिभोगी को नाली का उपयोग करने के लिए अधिकृत कर सकता है या उक्त उपयोगकर्ता को ऐसी शर्तों पर, जो उसे प्रतीत हो, उसका संयुक्त मालिक घोषित कर सकता है। किराया या मुआवज़े के भुगतान और उक्त परिसर की नाली को संचार नाली से जोड़ने और संयुक्त नाली के रखरखाव, मरम्मत, फ्लशिंग और साफ़ करने के लिए पार्टियों की ज़िम्मेदारियों के संबंध में न्यायसंगत। (2) उपधारा (1) के तहत किसी भी कार्य के निष्पादन के संबंध में जिस व्यक्ति के पक्ष में आयुक्त का आदेश दिया गया है, वह उसी प्रतिबंध और दायित्वों के अधीन होगा जैसा कि धारा 245 की उपधारा (4) में निर्दिष्ट है।

13. उपरोक्त उल्लिखित प्रावधानों के अवलोकन से संकेत मिलता है कि आयुक्त को जीएमसी अधिनियम के तहत अधिकार देकर नाली के मालिक या संयुक्त मालिक को ऐसे व्यक्ति को उस नाली का उपयोग करने की अनुमति देने के लिए मजबूर करने का अधिकार है जो ऐसे नाली का मालिक नहीं है। वास्तव में, आयुक्त को संपत्ति के मालिक के पक्ष में किसी अन्य संपत्ति के मालिक के स्वामित्व वाली नाली के माध्यम से पानी निकालने का अधिकार बनाने का अधिकार दिया गया है। मौजूदा मामले में अपीलकर्ता ऐसे अधिकार के सृजन की मांग नहीं कर रहा है। जैसा कि ऊपर दलील दी गई है और देखा गया है कि मामला यह दर्शाता है कि अपीलकर्ता एक अधिकार के बारे में दावा कर रहा है जो अस्तित्व में है और वह इस अधिकार की रक्षा करना और उसका प्रयोग जारी रखना चाहता है। मामले में दलील दी गई है कि उनमें से किसी के पास नाली का स्वामित्व नहीं है, बल्कि यह तर्क दिया गया है कि यह आसपास की सभी संपत्तियों की पश्चिमी सीमा के रूप में मौजूद है और प्रतिवादी उस स्थिति को बदलने की मांग कर रहा है और इसलिए उसे रोका जाना चाहिए। अपीलकर्ता सफल होगा या नहीं, यह उन सबूतों पर निर्भर करेगा जो दलील के समर्थन में पेश किए जाएंगे।

14. विचारणीय मुद्दा यह है कि क्या जीएमसी अधिनियम में इस तरह के प्रावधान के अस्तित्व से सिविल मुकदमे पर रोक लग जाएगी। उक्त प्रश्न का उत्तर देने के लिए, शिव कुमार चड्ढा बनाम दिल्ली नगर निगम और अन्य (1993) 3 एससीसी 161 के मामले में निर्णय का उल्लेख करना उचित होगा, जिसे वास्तव में विद्वान मुंसिफ ने भी नोट किया था। उसमें किया गया प्रासंगिक विचार इस प्रकार है: "11. पुराने दिनों में अधिकांश अधिकारों और देनदारियों का स्रोत सामान्य कानून में खोजा जा सकता था। तब वैधानिक अधिनियम कम थे। यहां तक कि ऐसे अधिनियमों ने केवल अधिकार या देनदारियां ही बनाईं, लेकिन शायद ही कभी समाधान के लिए मंच प्रदान किए। इसका परिणाम यह हुआ कि किसी भी व्यक्ति को यह शिकायत हो कि उसके साथ अन्याय हुआ है या उसका अधिकार प्रभावित हो रहा है, तो वह कानून के सिद्धांत पर सामान्य सिविल अदालत में जा सकता है कि जहां अधिकार है वहां उपाय है- "यूबी जस इबी रेमेडियम।" चूंकि विभिन्न क़ानूनों में अधिकार या दायित्व बनाने के लिए कोई आंतरिक उपाय प्रदान नहीं किया गया था, इसलिए सामान्य सिविल अदालतों को विभिन्न क़ानूनों के आलोक में शिकायतों की जांच करनी पड़ी। कल्याणकारी राज्य की अवधारणा के साथ, यह महसूस किया गया कि करों के भुगतान, सम्पदा के निहितार्थ के बाद दायित्वों और नागरिकों के एक वर्ग को अधिकार प्रदान करने के संबंध में देनदारियां बनाने वाले अधिनियमों को अपने आप में पूर्ण कोड होना चाहिए। उस उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए, अधिनियमों के तहत स्वयं मंच बनाए गए जहां पीड़ित व्यक्तियों की ओर से शिकायतों पर विचार किया जा सकता था। उच्च अधिकारियों के समक्ष अपील और पुनरीक्षण के लिए भी प्रावधान किए गए। 12. फिर एक सवाल उठा कि जहां एक विशेष अधिनियम ने एक अधिकार या दायित्व बनाया था और ऐसे अधिकार को लागू करने के लिए या कानून में किसी अधिकार के बिना किसी दायित्व के प्रवर्तन से सुरक्षा के लिए एक मंच भी प्रदान किया था, क्या कोई नागरिक अदालत का दरवाजा खटखटा सकता है। यह बताया जा सकता है कि कई क़ानूनों ने कुछ अधिकार या दायित्व बनाए हैं और उनके संबंध में उपचारात्मक उपाय भी प्रदान किए हैं। लेकिन ऐसे क़ानूनों ने नागरिक के सामान्य क़ानूनी अधिकारों को नहीं छुआ है। लेकिन कुछ क़ानून ऐसे हैं, जो जनहित में नागरिक के सामान्य क़ानूनी अधिकारों या देनदारियों को भी प्रभावित करते हैं, जो मौजूदा अधिकारों की प्रकृति में थे। दो प्रकार के अधिकारों या देनदारियों के बीच अंतर प्रकृति में सूक्ष्म है लेकिन साथ ही बहुत महत्वपूर्ण भी है।

23. नागरिकों के एक वर्ग की सुरक्षा के लिए कर कानूनों, कल्याणकारी कानूनों और अधिनियमों की संख्या में वृद्धि के साथ, एक प्रवृत्ति देखी जा सकती है कि ऐसे अधिकांश कानून विभिन्न प्राधिकरणों को निर्णय लेने की शक्तियां प्रदान करते हैं और वे अदालत की शक्ति को सीमित या बाहर करना चाहते हैं। उन निर्णयों की समीक्षा करें. इसका परिणाम यह है कि संहिता की धारा 9 के तहत अदालत की शक्ति को ऐसे विशेष अधिनियमों द्वारा कम किया जा रहा है, निर्मित देनदारियों या प्रदत्त अधिकारों के संबंध में। इस न्यायालय ने ऊपर उल्लिखित निर्णयों में दो प्रश्नों की जांच पर न्यायालय के अधिकार क्षेत्र के निष्कासन को बरकरार रखा है - (1) क्या जिसके संबंध में शिकायत की गई है, उसका अधिकार या दायित्व एक अधिनियम के तहत बनाया गया था और ऐसा नहीं किया गया था। क्या यह पहले से मौजूद सामान्य कानून से संबंधित है? (2) क्या ऐसे अधिकार के उल्लंघन या ऐसे अधिनियम के तहत दायित्व थोपने के संबंध में शिकायत के निवारण के लिए प्रदान की गई मशीनरी पर्याप्त और पूर्ण थी? न्यायालय के अधिकार क्षेत्र के निष्कासन को इस निष्कर्ष पर बरकरार रखा गया था कि प्रश्न में अधिकार या देनदारियां प्रश्न में अधिनियम द्वारा बनाई गई थीं और उनमें प्रदान किया गया उपचार पर्याप्त था।

24. लेकिन स्थिति अलग होगी जहां एक क़ानून का उद्देश्य पहले से मौजूद सामान्य कानून के अधिकार पर अंकुश लगाना और उसे कम करना है और जहां तक ऐसे क़ानून के तहत पारित आदेशों के खिलाफ उपाय का संबंध है, अदालत के अधिकार क्षेत्र को बाहर करना है। ऐसे मामलों में, अदालतों को इस सवाल की जांच करते समय अधिक सतर्क रहना होगा कि क्या पर्याप्त निवारण मशीनरी प्रदान की गई है, जिसके समक्ष पीड़ित व्यक्ति अपनी शिकायत दर्ज करा सके। कटिकारा चिंतामणि डोरा बनाम गुंटरेड्डी अन्नामनायडू [(1974) 1 एससीसी 567: एआईआर 1974 एससी 1069] के मामले में इस न्यायालय ने अडांकी तिरुवेंकटा थाटा देसिका चार्युलु बनाम ए.पी. राज्य के मामले का उल्लेख किया। [एआईआर 1964 एससी 807] ने कहा: (एससीसी पृष्ठ 579, पैरा 35) "यह प्रासंगिक रूप से जोड़ा गया था कि सिविल कोर्ट के अधिकार क्षेत्र का यह बहिष्कार दो सीमाओं के अधीन होगा। पहला, 'सिविल न्यायालयों के पास उन मामलों की जांच करने का अधिकार क्षेत्र है जहां अधिनियम के प्रावधानों का अनुपालन नहीं किया गया है या वैधानिक न्यायाधिकरण ने न्यायिक प्रक्रिया के मौलिक सिद्धांतों के अनुरूप कार्य नहीं किया है। दूसरा, वैधानिक न्यायाधिकरणों की शक्तियों की सटीक सीमा के संबंध में है। यह प्रश्न कि क्या कोई विशेष मामला उपरोक्त श्रेणियों में से पहली या दूसरी श्रेणियों के अंतर्गत

आता है, क़ानून के उद्देश्य और इसकी सामान्य योजना पर निर्भर करेगा, जिसे न्यायाधिकरण सेट अप को सौंपी गई जांच के दायरे और अन्य प्रासंगिक के साथ लिया जाएगा। कारक।" यह माना गया कि 1908 अधिनियम की धारा 3(2)(डी) के तहत कुछ संपत्तियों को 'संपदा' मानने का निपटान अधिकारी/न्यायाधिकरण का निर्णय शून्य था, इस घोषणा के लिए एक मुकदमा इस आधार पर विचारणीय था कि मुकदमा संपत्ति कोई 'इनाम गांव' नहीं थी। पाइक्स ग्रेनाइट कंपनी लिमिटेड बनाम आवास और स्थानीय सरकार मंत्रालय [(1960) एसी 260] में अपीलकर्ताओं ने टाउन एंड कंट्री प्लानिंग अधिनियम के तहत योजना की अनुमति प्राप्त करने की आवश्यकता के बिना अपनी भूमि का उत्खनन करने के अपने सामान्य कानून अधिकार की घोषणा की मांग की। 1947 उस संबंध में यह कहा गया था:

"अपीलकर्ता कंपनी को 1947 के अधिनियम द्वारा उत्खनन का कोई नया अधिकार नहीं दिया गया है। उनका अधिकार एक सामान्य कानून अधिकार है और एकमात्र सवाल यह है कि इसे कितना छीन लिया गया है। वे अधिनियम के तहत एक भी दावा नहीं करते हैं और कहीं और समाधान की तलाश करते हैं। इसके विपरीत, वे इस बात से इनकार करते हैं कि वे इसके दायरे में आते हैं और इस आशय की घोषणा चाहते हैं।

25. न्यायालय की शक्ति पर रोक के बावजूद, ऐसे क़ानूनों के तहत पारित आदेशों की जांच "क्षेत्राधिकार प्रश्न" पर की जा सकती है। उदाहरण के लिए: विभिन्न राज्यों में विभिन्न अधिनियमों के तहत 'सार्वजनिक भूमि' से अतिक्रमण हटाने के लिए एक विशेष मशीनरी प्रदान की गई है और ऐसे अधिनियमों के तहत गठित ऐसे विशेष न्यायाधिकरणों या प्राधिकरणों द्वारा पारित आदेशों के संबंध में अदालत के अधिकार क्षेत्र को वर्जित कर दिया गया है। भूमि को प्रश्न में अधिनियम में दी गई 'सार्वजनिक भूमि' की परिभाषा के अर्थ में सार्वजनिक भूमि नहीं माना जाएगा, और इस तरह के प्रावधानों के अनुसार लागू नहीं होगा।"

15. इसके अलावा, इस न्यायालय ने रमेश गोबिंदराम बनाम सुगरा हुमायूं मिर्जा वक्फ (2010) 8 एससीसी 726 के मामले में वक्फ अधिनियम, 1995 की धारा 85 के तहत सिविल कोर्ट के बार की जांच करते हुए एक अंतर निकाला था कि ऐसी शक्ति होगी केवल अधिनियम के कुछ प्रावधानों यानी वक्फ अधिनियम, 1995 की धारा 6, 7 और 83 के तहत उत्पन्न होने वाले मुद्दों के संबंध में ही लागू होता है और यह माना गया था कि वक्फ न्यायाधिकरण के निर्माण के बावजूद सिविल अदालत के समक्ष एक मुकदमा अन्य राहतों के लिए बनाए रखा जा सकता है। अधिनियम के तहत, जब तक कि विवाद न्यायाधिकरण में निहित शक्तियों के चार कोनों के

अंतर्गत न आता हो। इसलिए, जैसा कि उल्लेख किया गया है, अधिनियम के तहत सिविल अदालतों के क्षेत्राधिकार पर रोक होने के बावजूद, सीमित सीमा तक उत्पन्न होने वाले विवादों को छोड़कर अन्य सभी मुद्दों को सिविल अदालत के समक्ष सुनवाई योग्य माना गया था। प्रासंगिक विचार इस प्रकार है:-

"8. वक्फ और उससे संबंधित मामले लंबे समय तक वक्फ अधिनियम, 1954 द्वारा शासित थे। हालाँकि, इस विषय पर एक नए कानून की आवश्यकता महसूस की गई थी क्योंकि उक्त पहले अधिनियम के कामकाज में देखी गई कमियों, विशेष रूप से वक्फ को नियंत्रित करने वाले अधिनियमों के कामकाज में कमी देखी गई थी। बोर्ड, व्यक्तिगत वक्फ के प्रबंधन पर उनकी अधीक्षण और नियंत्रण की शक्ति। 1954 अधिनियम में बार-बार किए गए संशोधन, विचार के लिए उठते रहे प्रश्नों के प्रभावी उत्तर प्रदान करने में विफल रहे, संसद को वक्फ के बेहतर प्रशासन और उससे जुड़े या उसके प्रासंगिक मामलों के लिए वक्फ अधिनियम, 1995 के रूप में एक व्यापक कानून लाना पड़ा ।"

16. उपरोक्त परिस्थिति में, वर्तमान मामले को ध्यान में रखते हुए यह देखा गया है कि धारा 246, 247 और 248 में स्वामित्व और उस तरीके का उल्लेख किया गया है जिसमें नगरपालिका नाली से जुड़े नालों का उपयोग किया जाना है और आयुक्त को अधिकार दिया गया है नाली के मालिक को किसी अन्य संपत्ति के मालिक को उसका उपयोग करने की अनुमति देने के लिए मजबूर करने के लिए, उक्त प्रावधानों को उपयोग के मौजूदा अधिकार की घोषणा से संबंधित मुकदमे पर विचार करने के लिए सिविल कोर्ट पर एक व्यक्त या एक निहित बाधा के रूप में नहीं माना जा सकता है। नाली जैसा कि वादपत्र में बताया गया है।

17. वास्तव में, संपत्ति की खरीद की तारीख तक अपीलकर्ता द्वारा वादपत्र में दावा किया गया था कि नाली का अस्तित्व और उसका उपयोग पूरे समय किया जा रहा है, यह एक ऐसा मुद्दा है जिसे उन साक्ष्यों के आधार पर साबित किया जाना है जो इसमें प्रस्तुत किए जाएंगे। मुकदमा। जीएमसी अधिनियम की धारा 246, 247 और 248 में निहित प्रावधान ऐसे प्रावधान होंगे जो अपीलकर्ता की सहायता के लिए आएंगे यदि अपीलकर्ता द्वारा नाली के अस्तित्व को साबित करने के बावजूद अंततः प्रतिवादी नाली पर अपना स्वामित्व अधिकार स्थापित करता है। इसमें कोई संदेह नहीं है, अपीलकर्ता राहत की मांग करते हुए आयुक्त के पास एक आवेदन भी दायर कर सकता था, जिसके लिए आयुक्त अपने अधिकार का प्रयोग कर सकता था, लेकिन यह तभी उत्पन्न होता जब अपीलकर्ता ने यह मान लिया होता कि प्रत्यर्थी नाली का मालिक है। ऐसी

परिस्थिति में भी, यदि अपीलकर्ता को आयुक्त द्वारा राहत उपलब्ध नहीं कराई गई थी और यदि वह आयुक्त द्वारा इस तरह के अधिकार का प्रयोग करने के तरीके से असंतुष्ट था, तब भी वह राहत के लिए अदालत का दरवाजा खटखटा सकता था। प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने इस संबंध में तर्क दिया कि जीएमसी अधिनियम की धारा 438 के तहत अपील प्रदान की जाती है। हालाँकि, हम इसे वर्तमान प्रकृति के मामले में एक वैकल्पिक और प्रभावी उपाय नहीं मानते हैं। तत्काल मुकदमे में मांगी गई राहत पार्टियों के बीच आपसी विवाद में घोषणात्मक राहत की प्रकृति में है। जीएमसी अधिनियम के तहत प्रदान किए गए वैधानिक प्राधिकारी द्वारा विचार सारांश प्रकृति का है। इसके अलावा, प्रदान की गई अपील आयुक्त द्वारा जारी किए गए किसी भी नोटिस या की गई या की जाने वाली कार्रवाई के संबंध में है, जो वास्तव में केवल नाली के मालिक को अपील उपाय प्रदान करती है जिसके खिलाफ कार्रवाई प्रस्तावित है।

18. इसके अलावा, जैसा कि पहले ही उल्लेख किया गया है, इस मामले में वादी में निहित कथन और की गई प्रार्थना से पता चलता है कि अपीलकर्ता प्रतिवादी के स्वामित्व वाली नाली पर अधिकार बनाने की मांग नहीं कर रहा है और न ही इसके संबंध में कोई मुद्दा उठाया गया है। जीएमसी की नाली लेकिन जैसा कि मामला सामने रखा गया है, वह यह है कि अपीलकर्ता, सुश्री सुवोला देवी और प्रतिवादी की संपत्ति एक-दूसरे से सटी हुई है, जिसे सूट अनुसूची 'ए', 'बी' और 'सी' संपत्तियों के रूप में दिखाया गया है और पश्चिमी तरफ दिखाया गया है। अपीलकर्ता की संपत्ति से शुरू होने वाली संपत्ति में एक नाली है, जिसे सीमा के रूप में दिखाया गया है और यह पानी को जीएमसी नाली में प्रवाहित करने की सुविधा प्रदान करता है। मुकदमे में ऐसी राहत पर विचार किए जाने वाले साक्ष्यों के आधार पर किया जाएगा। इसलिए, ऐसी राहत किसी भी कानून के तहत वर्जित नहीं है।

19. उपरोक्त के आधार पर, यह स्पष्ट है कि उच्च न्यायालय ने मामले के इन पहलुओं पर ध्यान दिए बिना, याचिका को खारिज करने के लिए सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश VII नियम 11 (डी) में निहित प्रावधानों को गलत तरीके से लागू किया है। तात्कालिक तथ्य यह है कि किसी भी कानून के तहत न तो व्यक्त और न ही निहित रोक है। दूसरी ओर, विद्वान मुंसिफ ने टीएस नंबर 334/2011 में दिनांक 16.11.2013 को आदेश पारित करते हुए मुकदमे को कायम रखा।

20. परिणाम में, सीआरपी संख्या 128/2014 में गुवाहाटी उच्च न्यायालय, गुवाहाटी द्वारा पारित आदेश दिनांक 06.06.2014 को रद्द कर दिया गया है। टाइटल सूट नंबर 334/2011 का वाद विद्वान मुंसिफ नंबर 2 कामरूप गुवाहाटी की फाइल में बहाल किया जाता है। इसमें शामिल पक्ष

01.09.2021 को बिना किसी पूर्व सूचना के उपस्थिति की पहली तारीख पर विद्वान मुंसिफ के समक्ष उपस्थित होंगे, जिसके बाद मुकदमे पर उसके गुण-दोष के आधार पर विचार किया जाएगा।

21. तदनुसार, लागत के संबंध में बिना किसी आदेश के अपील स्वीकार की जाती है।

22. लंबित आवेदन, यदि कोई हो, निष्पादित माना जाएगा।

अपील स्वीकृत।

अजय कुमार श्रीवास्तव